

पात्र-परिचय

पुरुष—

- १—सूत्रधार
२—श्रीकृष्ण

नाटकक निर्देशक ।
यदुवंशी राजकुमार, नायक ।



स्त्री—

- १—नटी
२—राधा
३—ललिता
४—विशाखा
५—(चन्द्रावली)
६—व्रजवारीगण

सूत्रधारक पत्नी ।
नायिका, राजकुमारी ।
राधाक सखी, झगड़ा लगओनिहारि ।
राधाक सखी, कृष्णक दूती ।
कृष्णक गुप्त प्रेयसी ।
रासलीला मे भाग लेनिहारि व्रजक
रत्नीगण ।



पञ्चीक-हास

—सङ्ग

१. सङ्गो जगज्जनी
१. सङ्गो जगज्जनी

सङ्गो—१
सङ्गो—१



—प्रिड

१. प्रिड जगज्जनी
१. प्रिड जगज्जनी
१. प्रिड जगज्जनी
१. प्रिड जगज्जनी
१. प्रिड जगज्जनी
१. प्रिड जगज्जनी
१. प्रिड जगज्जनी

प्रिड—१
प्रिड—१
प्रिड—१
प्रिड—१
प्रिड—१
प्रिड—१
प्रिड—१

म०म० हर्षनाथसा-विरचितम्

माधवानन्दनाटकम्

अथ प्रथमोऽङ्कः

[नान्दी गीति सं०—१]

जय जगज्जनी, जय-जगज्जनी, देह सुमति मृगपतिगमनी ॥०॥
सरसिरहासन विषदविनाशन, कारिणि मधुकैटभदमनी ।
दितिसुतरञ्जन सुरगणगञ्जन महिषमहासूरवलदलनी ॥
त्रिभुवनतारिणि महिषविदारिणि, धूमरनयन-भसमकरनी ।
चण्डमुखशिरखण्डनकारिणि, उनमत-रक्तवीज-शमनी ॥
अतिबलशुम्भनिशुम्भविनाशिनि, निजजनसकल-विषदहरनी ।
तुअ गुण निगम अगम चतुरानन, कहि न सकत कत सहस्रकणी ॥
अमर-निशाचर वनुज मनुजशिर, विकुरकलित जित रक्तमनी ।
तुअ-पदयुगलसरोरुह मधुकर-हर्षनाथ कवि सरस भनी ॥०॥

पहिल अङ्क

[गीत सं०—१]

जगज्जनी=संसारक माय । मृगपति-गमनी=सिंहवाहिनी । सरसिरहा-
सन=कमलक आसन वाली । मधु-कैटभ-दमनी=मधु ओ कैटभ नामक राक्ष-
सक नियन्त्रण करवाली । दितिसुत-रञ्जन=देवताके प्रसन्न
कएनिहार ओ देवताके दुर्गति कयनिहार जे महिषासुर तकरा
सैन्य-सहित मारनिहारि ॥ धूमर=धूम आ सनक आशि स
धतुरके भसम कयनिहारि । उनमत=जन्मत । निगम आगम=वेद ओ तन्त्र-
शास्त्र । चतुरानन=बुद्धि । कत सहस्रकणी=कतको खेपनाग । अमर-निशा-
चर=देवता, राक्षस, दैत्य ओ मनुष्यक मायिक केश भिड़ला सँ जोमित तथा
लालमज्जिक घोभाके जितयवला अहाँक दुनु चरणकमलक भोश हर्षनाथकवि ॥

अपि च,

या देवी कुमुदेन्दुकाभिरुचिरा शुभ्राम्बरा शोभना,
चन्द्रार्द्धाङ्गितमस्तकेन्दुवदना हंसाधिकृता करैः ।
वीणामक्षगुणं सवाङ्मयकलशं विद्यां वधानादराद्
भक्तानन्दकरी सदा वितरतु श्रेयांसि सा शारदा ॥१॥

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । एषा खलु खण्डवलाकुलकमलदिवाकरस्य
महाराजसर्वासहात्मज-नेत्रेश्वरसिंहसनुजन्मनः श्री श्रीमदेकरदेवसिंहदेवस्य
गुणजनोपासिता परिपत कस्याप्यभिनवरूपकस्य प्रयोगावलोकनाय समुत्कण्ठि-
तेव लक्ष्यते । तत्कतस्थेन रूपकेणाश्रोपस्थान्तव्यं, येनेतस्याः प्रसादपात्रतां गमि-

आओरो—

जे देवी कुमुदक फूल ओ चन्द्रमाक कान्तिक समान प्रकाशित छवि,
उज्जर वस्त्र सौ सुन्दरि छवि, आधा चन्द्र लागल माँसवाली, चन्द्रमाक
समान मुँहवाली हंस पर चढ़लि छवि हाथ सौ वीणा, रुद्राक्ष माला,
अमृतपूर्ण घेल ओ विद्याके आदर सौ रखने छवि ओ भक्तसभ के आन-
न्धित कयनिहारि छवि में सरस्वती भगवती सतत कल्याण करथु ॥१॥

[नाम्दीक अस्त मे]

सूत्रधार—अधिक विस्तारक प्रयोजन नहि । ई खण्डवला-वंशरूपी कमलक सूर्य-
स्वरूप, महाराज रससिंहक पुत्र-नेत्रेश्वर सिंहक बालक श्रीमान् एक-
रदेवस्य सिंहक गुणवानलोकनि सौ सेवित सभा कोनो नवीन रूपकक
(दृश्यकाव्यक) प्रयोग देखवाक हेतु उत्कण्ठित जकाँ देखि पड़ैछ । से
कोन रूपक सौ एतय उपस्थित होइ, जाहि सौ एहि सभाक कृपापात्र
होयब से नहि युक्त छी । (फेर मोन पाड़वाक अभिनय कय) हमरा-
लोकनिक लग 'सकराडी' वंश मे उत्पन्न—कवि ओ पण्डितक मण्डली
मे श्रेष्ठ श्रीहर्षनाथशर्माक द्वारा बनाओल समर्पित माधवानन्द
नामक नवीन नाटक अछि, जाहि मे—रासलीला, प्रेम, गर्व, मान,

व्याप्तीति नाट्यवस्थामि । (पुनः स्मृतिमभिनीय) अस्ति किलास्मात् सकराडी-
कुलनन्दनेन कविपण्डितकुलतिलकेन श्रीहर्षनाथशर्मणा विरचय्य समर्पितं माधवा-
नान्दं नाम नवीनं नाटकम् । यत्र खलु—

रासक्रीडा - प्रेमगर्वमानानुषयविस्तरः ।

वर्णितोऽनुनयाः पश्चात्कान्तक्रीडनं तथा ॥२॥

तदभिनयेनैषा रञ्जनीया । तत्साहाय्यनिमित्तं गृहिणीमाह्वयामि तावत् ।
(परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखम्) प्रिये ! इहागम्यताम् ।

नटी—(प्रविश्य) एषांमिह, आणवेदु अञ्जउतो । [एषाऽस्मि आज्ञापयतु
आर्षपुत्रः ।]

सूत्र—प्रिये ! पश्य रमणीयतां चरतमयस्य । इह हि.

निमग्नमम्बरतलं विमला सरस्य

इच्छच्छम्भुगाङ्गकचम्बितदिङ्मुखानि ।

सम्कुलकंरववनीषु मनोहरासु

गुञ्जन्ति मञ्जु मधुवातरता मिलित्वा ॥३॥

तदेवत्रिसामधिकृत्य सङ्गीतकमनुष्ठीयताम् ।

पश्चात्ताप, प्रार्थना आदिक विस्तार वर्णित भय, बाद मे बनकीड़ा
सेहो वर्णित अछि ॥२॥

तकरे अभिनय सौ एहि सभाके प्रसन्न करी । ताहि मे सहायताक
हेतु घरवाली के तावत् बजबंत छी । (धूमि नैपथ्य दिस) प्रिये ! एम्हर
आउ ।

नटी—(प्रवेश कय) इयेह छी, आज्ञा देख आर्षपुत्र ।

सूत्र—प्रिये ! देख, घरद ऋतुक सुन्दरता । एतय तँ—

आकाश बिन्दु मेधक अछि, पोखरि स्वच्छ अछि लहराइत चन्द्रमाक
किरण सौ व्याप्त सकल दिशा अछि ओ फुलायल कुमुदिनीक सुन्दर वन
मे मधु पीवा मे संलग्न श्रीरा मधुर गुञ्जन करैत अछि ॥३॥

ते एहि रातिका विषय लयके संगीत प्रस्तुत करू ।

नदी—जहा आणवेदि अजवडती । [मथाऽऽज्ञापयति आर्यपुत्रः ।] (इति गायति ।)

[गीत सं०-२]

सुन्दर शरद समय सुखवागे ।
सज्ज जलद गेल, विमल गंगन भेल, शशिमण्डल अभिरामे ॥
तेजि ककुभकामिनि निज दिनमणि अस्तशिखर चल गेला ।
निरखि सुन घर, जनि रजनीकर, उपपति उपगत भेला ॥
सफल नयनद्विचोर तिमिर जनि, हिमकर-दीप-तरासे ।
सधन-विटपिदल-विषम-महीतल, गिरिकन्दर कर बासे ॥
रविकर-कलित-वर्धित-कमलनि तँह, कुमुद-पराजित भेला ।
दिनकर-विरह निरखि निशि कुमुदिनि, तसु सम्पति हरि लेला ॥
रजनि मलिन नलिनी तेजि मधुकर, कुमुदिनि अनुगत होई ।
सम्पद सकल चराचर अनुचर, आपद बन्धु न कोई ॥
निर्मल सरित शरदसमयोचित, कमिक पुलिन बरगावे ।
लाज अधीन नवीन गुवति जनि, लघु लघु जघन देखावे ॥

नदी—जहा आणा देवि आर्यपुत्र । (गवैत छवि) :—

[गीत सं०-२]

सज्ज जलद = पानिभरल मेघ । अभिरामे = सुन्दर । ककुभकामिनि = विशालपी नायिका । दिनमणि = सूर्य । रजनीकर = चन्द्रमा । उपपति = परपुरुष । उपगत = उपस्थित ॥ नयन द्विचोर तिमिर = आँखिक प्रकाशके* चोरओतिहार अन्धकार । हिमकर-दीप-तरासे = चन्द्रमाखपी दीपक प्रकाशक हरे । सधन विटपि दल = महान वन शी भवान्तक पृथ्वी पर ओ पर्वतक चन्द्रमा मे ॥ रविकर-कलित = सूर्यक किरण सँ सोचित एवं घेरल कमलनी सँ कुमुदक फूल हारि गेल । दिनकर-विरह = राति मे (कमलिनीके) सूर्यक विरह मे देखि । तसु = ओकर (कमलिनीक) । रजनि मलिन = राति मे मोलायल । नलिनी

मलय पवन बहु, चित नहि थिर रह, परिहर मानिनि माने ।

एकरदेवरसिह कुम्भधि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥

सूत्र—त्रिवे ! रमणीयं खलु गीतम् ।

(नेपथ्ये दोहा-१)

बन्धुजीव नथमल्लिका, केवकि कुमुदिनि कुम्भ ।

चन्द्रकला मधुपान करि गुञ्जन मत्तमिलिन्द* ॥

सूत्र—(आकण्ठ) इय खलु ब्रजकामिनीभिरसह रासक्रीडाप्रसक्तस्य मुरली नाद-यतः श्रीकृष्णस्य प्रावेशिकी वंहा गीयते । तदेहि आवागम्यनन्तरक-रणोपाय सज्जीभवावः । इति निष्क्रान्ती) ।

॥ इति प्रस्तावना ॥

= कमलिनीके । मधुकर = भौरा । कुमुदिनि अनुगत = कुमुदिनीक पाछु लागल । सम्पद = सम्पत्तिमाल मे । सकल चराचर अनुचर = सब स्वावर ओ जङ्गम सेवक होइछ ॥ सरित = नदी । कमिक पुलिन = कमलः अपन तट ॥

सूत्र—त्रिवे ! बड़ दीव गाओल ।

[नेपथ्य मे दोहा—] मधुरी, बेली, केओला, कुमुदिनी, कुम्भ ओ चन्द्रकला फूलक पराग पीबि मत्त भौरा गुञ्जन करैछ ॥

सूत्र—(अकानि) ई तँ ब्रजक नायिका सभक संग रासलीला मे लागल मुरली बजबैत श्रीकृष्णक प्रवेश करवाक दोहा गाओल जाइछ । तँ आउ हमरो दुहु गोठय अग्रिम कार्य हेतु तैपार होइ ।

[दुहु बहार भय गेलाह ।]

[इति प्रस्तावना]

१-वक्ष्यमाणचन्द्रावलीकृष्णसङ्गमसूचकत्वादेव पताकास्थानकम्, 'प्रस्तु-सागन्तुभावस्य वस्तुनोऽभ्योक्तिसूचनं पताकास्थानकम्' इति दशरूपोक्त-लक्षणात् ।

(सतः प्रविशति यथानिदिष्टः श्रीकृष्णो व्रजकामिन्पश्यन्)

गीत सं०—३

आनन्द नन्दकिशोर, आज व्रज रास रचो ॥
केतकि कुन्द मुकुट परिमल लय, मलय-पवन यह धीर ।
पूरन चन्द किरण चक्रमक कर, विकसित कुञ्ज कुटीर ॥
अलक विरचि सिर सिन्दुर, लोचन, कज्जल, उर विच हार ।
घरघर सज्जो निकसलि व्रजवनिता, तूपुर कर भक्तकार ॥
विकञ्जित अलिगुञ्जित भूषण, शिञ्जित चौदश पुर ।
गावय गीत मधुर धुनि सखिगण, जनम ताप कर दूर ॥
बंशी अधर, मुकुट शिर, कछनी, कटि, तनु ललित त्रिभङ्ग ।
नटवर भेष किये यदुनन्दन, विहरत राधा सङ्ग ॥
जप तप नियम करत कत मुविजन, जेहि पद दर्शन काज ।
हर्षनाथ भन तसु गोपीजन, सहज दरश कर आज ॥

राधा—(सर्वतो विलोक्य संस्कृतमाश्रित्य) कथम्, प्रभातप्राया रजनी । इह हि—

[सखन पूर्वक निर्देशानुरूप श्रीकृष्ण ओ व्रजक कामिनीसम प्रवेश करैत छथि ।]

[गीत सं०—३]

परिमल = सुगन्ध । कुञ्जकुटीर = लतगृह सँ बसल कुटी । अलक
विरचि = केश सजाय । उर विच = छातीक मध्य मे । व्रजवनिता =
व्रजवासिनी नारी ॥ विक-ञ्जित = कोइलीक कटुकव । अलिगुञ्जित
= भौराक गुनगुनायथ । भूषणशिञ्जित = गहनाक सनसनायथ ।
पूर = भरैत अछि । जनम ताप = जनजन्मक दुःख ॥ अधर = डोर
पत्र । कछनी कटि = डोर मे लघुवस्त्र । त्रिभङ्ग = त्रिबली (पेटक
तीन थेंगी) ॥

राधा—(सब दिस देखि संस्कृतक आश्रय लय) की भोरकबा राति भय गेल ।
एहिदाम तँ—

दृष्ट्वा रासमहोत्सवं निशि शशी ताराभिरत्यादरा-
न्मूनं जागरणेन सम्प्रति दृढं खिन्नः परिभ्राम्यति ।
एषा कैरविणी शुभाऽनुहरते म्लानि मुधाशोस्वती
दृष्ट्वा म्लानमरिब्रजं सरसिजवातसमुज्जम्भते ॥४॥

श्रीकृष्ण—अहम् पुनरेवसुप्रेक्षे—

काम्ते ! त्वन्मुखमण्डलेन विजितः क्षीणाभिमानश्शशी
मूनम्यज्जति वारिधावनुगतिं कुर्वन्ति तस्य प्रिया ।
तारास्सर्ष्मिदं विलोक्य कुमुदैस्तद्वन्धुभिः खिद्यते
दृष्ट्वा कैरविपत्तिमम्बुजकुलं हृष्टं समुज्जम्भते ॥५॥

भवतु, सम्प्रति प्रातस्समयोचितकर्मनुष्ठानाय सर्वैरेवात्मानाभिर्गन्त-
व्यम् ।

राति मे रासमहोत्सव के अत्यन्त आदर सँ तारासमक संग
देखिके चन्द्रमा जगरना सँ एखन खिन्न भेल अत्यन्त मलिन भय रहल
छथि । ई कुमुदिनी चन्द्रमाक सती नायिका शुद्धा सेहो मलिनता प्राप्त
कय रहल अछि । शश्वल के मलिन देखि कमलक समूह विकसित
भय रहल अछि ॥४॥

श्रीकृष्ण—आ हमतँ एहन सम्भावना करैत छी—

प्रिये ! अहाँक मुखमण्डल सँ जितल गेल क्षीण अभिमानबला
चन्द्रमा निश्चित समुद्र मे डुबि रहल छथि ओ हुनक प्रियालोकनि
(तारा) हुनक अनुसरण करैत छथि—एहिदृश्य के देखि हुनक
बन्धु कुमुदलोकनि खिन्न होइत छथि—शत्रुक विपत्तिके देखि
कमल सभ प्रसन्न भय विकसित होइत छथि ॥५॥

बेस, एखन प्रातःकालक उचित कार्य करवाक लेल हमरासबहि
चलैत चली ।

ब्रजकामिन्यः—तथा [तथा] ।

(इति निष्क्रान्तरसम्भवे)

॥ इति प्रथमोऽङ्कः ॥

अथ द्वितीयोऽङ्कः

[ततः प्रविशति श्रीकृष्णप्रे मखविता राधा, ललिता च]

राधा—

[गीत सं०—४]

किं कहव अपन मोहामे ब्रजनन्दन वर पाओल भोगे ॥
पुरुष पुजल हरवामा से मोर पुरल सकल मनकामा ॥
सकल कला परबीना रहसि सदा पहु मोर अधीना ॥
पलक न छाड़ि सङ्गे, कबहु करसि नहि मोर मनभङ्गे ॥
प्रेम विनति कत बेरी, करइत ठाढ़ रहसि मुख हेरी ॥
हृषनाथ कवि भाने एकरदेशबरसिह रस जाने ॥

ब्रजहारीगण—बेस ।

[सभ बहार भव गेल ।]

॥ पहिल अङ्क समाप्त ॥

दोसर अङ्क

[तखन श्रीकृष्णक प्रेमसँ गविता राधा ओ ललिता प्रवेश करैत छवि ।]

राधा—

[गीत सं०—४]

ब्रजनन्दन वर = श्रीकृष्णके वरक रूप मे । हरवामा = महादेवक
मुन्नी (गौरी) । कला-परबीना = सभ कला मे प्रबीण (कुशल) ॥

(दोहा)-२

करसि यसोदानन्द मम, प्राण अधिक सम्मान ।
मम सहचरि गोपालि जन, दासीजन सम जान ॥

ललिता—

(दोहा)-३, ४

अचरज लागय मोहि सखि वृथा गरव तुअ देखि ।
वचनप्रीत हरि तोहि कर परजन प्रेम विवेखि ॥
रास-समय चन्द्रावली, लोचन भाव जनाय ।
तुअ छल करि सखि ! धाम तसु गगन कयल यदुषाय ॥

[गीत सं० - ५]

सखि हे ! अपरव माधव-रोति ।
वचन अधिक तुअ प्रीति जनावधि, अन्तर आनक प्रीति ॥
आज रमस रस, गेलहुँ काजवश, तुअ प्रियसहचरि-गेह ।
देखल नयन भरि, सुनहुँ यत्न धरि हरि-चन्द्रावलि नेह ॥
तुअ छल करि हरि, गेलाहुँ कोनहुँ परि सँक समय तसु धाम ।
चरण पखारि नारि अङ्गुभरि शयन बैसाओल स्वाम ॥

ललिता—

[दोहा]

वृथा गरव = व्यर्थक गर्व । वचनप्रीति = बाले टा सँ प्रेम । पर-
जन-प्रेम = आनक संग प्रेम कय । रास-समय = रासक्रीड़ाक काल
मे । चन्द्रावली = कृष्णक एक प्रेयसी । लोचन = आँखि सँ । छल करि
—लाय कय । धाम तसु = ओकर घर । यदुषाय = श्रीकृष्ण ॥

[गीत सं०—५]

अपरव = अङ्कृत । अन्तर = हृदय मे । रमस रस = उरसुक भव ।
प्रियसहचरि-गेह = प्रियसखीक (चन्द्रावलीक) घर । अङ्गुभरि = भरि
पाँज के । शयन = ओछान पर । स्वाम = कृष्णके । मुदित = आन-

दुअओ बुहुक गुन - मान करय पुन, मगन परस्पर प्रेम ।
कामुक कामिनि, परम मुदित जनि निर्धन पाओल हेम ॥
अवहु बुझिअ धनि, कपट प्रेम हुनि; करिअ हृदय अवधान ।
एकरदेश्वरसिंह बुझिअ रस, हर्षनाथकवि भान ॥

अपि च,

[गीत सं०-६]

सम्बर शरद समय भल सजनी, चकमक चाननि राति ।
रचल सुरत नव कामिनि सजनी, मदन मनोरथ माति ॥
अधर सुधारस पीउल सजनी, कपट सुतल पट्टु हेरि ।
विहसि उठल पट्टु से देखि सजनी, लाज वदन लेल फेरि ॥
निअ - कर वसन दूर करि सजनी अभरन सकल उतारि ।
कुचयुग परसि बिहसि पट्टु सजनी, पिउल अधर अवधारि ॥
निअ-कर गहि अछुमभसि सजनी, धवन सोआओल नाह ।
यामिनि-जलद तेहवस सजनी, करय देह एक चाह ॥
नखक्षत-भरल पयोधर सजनी, निरखि एहन होअ भान ।
कनकलता पर गिरियुग सजनी, ततय उगल दश चान ।
हर्षनाथ कविशेखर सजनी, रसमय मन दय भान ।
एकरदेश्वरसिंह रस सजनी, भावक सरस सुजान ॥

नित । निर्धन = गरीब आदमी जेना सोन पओने हो । अवधान = विचार, ज्ञान ॥

आओरो,

[गीत सं०-६]

मदन-मनोरथ मति = कामवासनाक अभिलाषा में मत्त भय । अधर सुधारस = ठोर रूपी अमृतक रस । निअ-कर वसन = अपना हाथें वस्त्र के । अभरन = गहना । नाह = नाथ (प्रियतम) । यामिनि-जलद = बरसातक राति में । नखक्षत-भरल पयोधर = नहक चिह्न हैं युक्त स्तन । कनकलता = सोनाक लत्तो (नायिकामें) । गिरियुग = दू टा पर्वत (स्तन) । दश चान = दस टा चन्द्रमा । दसो टा नहक दस चिह्न ॥

अपि च,

[गीत सं०-७]

सहण त्रयस मंदभातलि सजनी, सरस मदन-वस नाचि ।
रचल रसिक-सङ्ग मन दय सजनी, रसि विपरीत विचारि ॥
ललित युगल कुच ऊपर सजनी, तनु-लतिका सञ्चारि ।
मेरु युगल लय धिर भय सजनी, दामिनि रचल विहारि ॥
नाह वदन चञ्चल धूमि सजनी, पिउल अधर अतिमन्द ।
जनि पङ्कज वञ्चन नरि सजनी, बन्धुजीव पिव चन्द ॥
फूल-चिकुर कलित मुख सजनी, स्वेदबिन्दु लस ताहि ।
पुजल मोतिनिकर जनि सजनी, जलधर क्षसि अवगाहि ॥
सुरत समाधि लाजवस सजनी, हसलि नाहमुख हेरि ।
जनि कुचभर खेदित पट्टु सजनी, निषसि सुधारस डेरि ॥
हर्षनाथ कविशेखर सजनी, रसमय मन दय भान ।
एकरदेश्वरसिंह रस सजनी, भावक सरस सुजान ॥

राधा—(सखेदम्) सहि सत्त्वं एव । मएवि रासोसरे तस्स तारिओ
लोअण-वायारो दिट्ठो । ता सब्ब सम्भावीअइ । अओ बरं

आओरो,

[गीत सं०-७]

मदन-वस = कामक अधीन । तनु-लतिका = वैहलता । मेरु युगल =
दुइ सुसेर पर्वत । दामिनि = विजयोका । विहार = श्रद्धा । नाह =
नाथ (प्रेमी) । वदन = नायिकाक मुँहके । अधर = ठोर । पङ्कज
वञ्चन = कमलके ठाँके के । नरि = नदी में । बन्धुजीव = मधुरीक
फूल । चिकुर = केत सँ । कलित = शोभित । स्वेदबिन्दु = घामक
बिन्दु । लस = शोभित । मोति-निकर = मोतीक समूह सँ । जलधर =
मेघ सँ । क्षसि = चन्द्रमाके । अवगाहि = नहाय । समाधि = समाप्त
कय । कुचभर-खेदित = स्तनक भार सँ आकल । पट्टु = पतिके ।
निषसि = नायिका छिटैत अछि । सुधारस = अमृतक रस ॥

राधा—(पुखी होइत) सखि ! ई सत्त्वे विक । हमहूँ रासक अवसर पर हुनक

मालतीवाटिकां गदुअ जहा तहा अप्पणं विल्लोण्णिमि ।
[सखि मत्स्यम् इदम् । मयाऽपि रासावसरे तस्य तादृशी लोचनव्यापारो
दृष्टः । तत् सर्वं सम्भाव्यते । अतः परं मालतीवाटिकां गत्वा आत्मानं
विनोदयामि ।]

(इति निष्क्रान्ते ।)

इति द्वितीयोऽङ्कः

अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—अद्य श्रुतमया यत्किंल ललितामुलाञ्चद्रावलीभवनसमनवृत्ताभं
श्रुत्वा प्रकुपिता मत्प्राणाधिका राधिका परित्यक्तसकलालङ्कारा
मालतीवाटिकायां तिष्ठति । तदचिरमेवैनामुपसृत्य प्रसादयि-
ष्यामि । (सर्वतः परिक्रम्य) इदम् मालतीवाटिका । तदत्र प्रविश्य

ओहने आंखिके चेष्टा देखलहुँ । ते सबकिछु सम्भव अछि । !
एकर बाद मालती-वाटिका जाय जेना तेना मनके बहुलाबी ।

[दुहुँ बाहर भेलौहि ।]

॥ द्वितीय अङ्क समाप्त ॥

तेसर अङ्क

[श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण—आइ हम सुनल अछि जे ललिताक मुँह सँ चन्द्रावली-भवन जयबाक
षटमा सुनि अत्यस्त तमसायल हमर प्राणहुँ सँ अधिक प्रिया राधिका
गहना-गुरिया त्यागि मालती-वाटिका मे छथि । त जल्दीये हुनक लग
जाय प्रसन्न करब । (कय दिस टहलै) ई मालती-वाटिका धिक, त

लतास्तरितो भूत्वा तस्या रहस्यसम्भाषणं शृणोमि (इति तथा
करोति) ।

(ततः प्रविशति सख्या ललितया सह ययानिदिष्टा राधा)

राधा—

[गीत सं—८]

मवि है बुभल हरिक अमुरागे ।
मधुमय वचन भरम हम गइलहुँ कि कहब अपन अभागे ॥
सुरतखीज उत्तर हम फेकल, रोदन निजैन-मेहा ।
बधिर कान मृदुगान कयल जनि, कयल गोपशिशु मेहा ॥
सज्जन बाप, ताप रजनीकर, बायस चुचिता रीति ।
फणिकुल सहन, तपन कर शीतल, दुर्जन होअ न प्रीति ॥
दुर्जन-मेह, रेह सौदामिनि, संकत-सेतु समाने ।
कोटि जनन कल तइअओ न थिर रह, ई जग के नहि जाने ॥

एतय प्रवेश कय ललीक अइ भय हुनक एकांत भाषण सुनेत छी ।
(तहिना करैत छथि ।)

[तखन सखी ललिताक संग पूर्वावणिता राधा प्रवेश करैत छथि ।]

राधा—

[गीत सं—९]

मधुमय वचन-भरम = मधु सँ भरल वचनक भरम मे । सुरतखीज =
कलावृक्षक बीया के । उत्तर = (ऊपर) उत्तर भूमि मे, रोदन = कानल ।
निजैन मेहा = विनू लोकक घर मे । बधिरकान = बहीरक कान मे
कोमल गीत गओल । गोप-शिशु मेहा = गोभारक वच्चा सँ (कृष्णसँ)
मेह कयल । सज्जन बाप = सज्जन के अहङ्कार । ताप रजनीकर
= चन्द्रमाके गर्मी । बायस चुचिता रीति = कौआके पवित्रताक ढंग ।
फणिकुल सहन = साँप के सहनशीलता । तपन-कर शीतल = सूर्यक
किरण ठंडा । दुर्जन = दुष्ट व्यक्ति के मेह नहि होइछ । दुर्जन मेह

सपनहु कबहु पलहु नहि मानवः हुनक वचन परमाने ।
एकरदेशवरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥

ललिता सहि । पुत्त खु इदं । [सखि ! युक्त खल्विदम् ।]

श्रीकृष्णः—(श्रुत्वा स्वगतम्) राक्षसियं कोपवर्जिता प्रेयसी । तदेतां यथा-
तथा प्रसादयामि । (इत्युपसृत्य) कुशलम्भवत्याः ?

राधा—(मौनमवलम्ब्य) धोमुखी तिष्ठति ।

श्रीकृष्णः—केवमपूर्वा रीतिः । (इत्युक्त्वा राधाङ्कुरे गृह्णाति) ।

राधा—(करमाच्छिद्य, परावर्त्य मुखं, तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

[गीत सं—६]

विशुन-वचन सुनि, रोप करहु घनि, की मोर भेल अपराधे ।
मुअ विपरीत मनहु नहि चिन्तल, प्रेम करहु किए बाधे ॥
मानिनि !

=वुर्जितक रवेह । रेह सीदामिनि = विजलोका रेखा । सेवत-सेवु =
वातुक आन्ध । समाने = ई सभ तुल्ये होइछ । कोटि जतन = करोड़ों
प्रयास ॥

ललिता—सखी । ते ठीके ।

श्रीकृष्ण—(सुनि स्वगतं) राक्षे ई कोषक अधीन छथि प्रिया । तँ हिनका जेना
तेना प्रसन्न करी । (लग जाय) अहाँ निके छी ?

राधा—(बुझी लाघि नीचाँ मुहें रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—ई कोन अद्भुत डंग कयल अछि ? (ई कहि राधाक हाथ परैत
छथि ।)

राधा—(हाथ छोडाय, मुँह केरि डाढ़ि रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—

[गीत सं—६]

विशुन-वचन = चुगिलाक बात । रोप = तामस । विपरीत = विरुद्ध ।

मलय-समीर बहय पिक कुहकय, एसरय कुसुम सवासे ।

चमकल खाननि रसमय यामिनि, ततय मान उपहासे ॥

जत अछि जगत विदित बनितागुण, गुअ तनु सकल निवासे ।

समुचित तदय हृदय करि सुन्दरि, पुरिअ याचक आसे ॥

सुन्दरि ! नयन निहारि दूर कर, लोचन - नयन - निखासे ।

जओ पुन कण्ठक लागु चरणमहु, कण्ठक तहु होअ कासे ॥

करिअ बिनति कलजोड़ि मानवति ! परिहर असमय - माने ।

एकरदेशवरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥०॥

अपि च,

[गीत सं—१०]

सुन्दरि ! अयलहुँ तुअ गुण जानि ।

न करिअ गुनमति ! प्रेमक हानि ॥

सकलशरीर कुसुमसम तोर ।

साहि उचित नहि हृदय कठोर ॥

बिन कारण तुअ अपजय रोप ।

हम कि कहय मोर करमक दोष ॥

न करिअ सुन्दरि ! वदन मलान ।

हेरइत होअ मोर विकल परान ॥

मलय-समीर = मलयाचलक वसात । पिक = कोइली । कुसुम-सवासे

= कूलक सुगन्धि । खाननि = चाँदनी । यामिनि = राति । तत = जतेका

जगत विदित = संसार मे ख्यात । बनितागुण = नारीक गुण । याचक

आसे = मकनिहारक आशा केँ । लोचन = आँखि सँ । नयन-निखासे =

आँखिक खुट्टी (आँखि मे गड़ल मुश्म कण) केँ । कण्ठक = काँट

चरणमहु = पायर मे । तहु = सँ । परिहर = छोड़ू ॥

आजोरो

[गीत सं—१०]

कुसुम-सम = कूलक समान । करमक = पूर्वाकृत कर्मक (भाग्यक) ।

वदन मलान = मुँह मलिन । हेरइत = अहाँ दिअ तकैत । भापि =

भाषिय सरस वचन करि हास ।
 अनुगत जन भनि न कर निरास ॥
 रसमय हर्षनाथ कवि भान ।
 एकरवेश्वरसिंह रस जान ॥

राधा—(तथैव विमुखी तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

रुष्टा यद्यसि माम्पति प्रियतमे विष्णुक्षणाभ्यां करो
 ताम्बुलेन रदच्छदावय कुची हारेण हीनो पुनः ।
 पादो नूपुरवंशवेन कुरुषे चित्रं तु ते चेष्टितं
 कः कुर्यात्परसम्पदोऽपहरणं मुखे ! परस्मिन् दया ॥६॥

अपि च,

[गीत सं०—११]

रमनि हे ! सुनिअ वचन दय कान ।
 जैओ मोर मानिअ रोग रोप करि कर धनि । दण्डविधान ॥
 कुलिश समान बान करि लोचन दिहु करि भोह कमान ।
 करि समधान अचानक वेधिय न करिय वदन मलान ॥

बाजू । अनुगत जन = शरणागत व्यक्तिके ॥

राधा—(ओहिना मुह फेरने रहै छयि) ।

श्रीकृष्ण—हे प्रियतमे ! जौ तमसायलि हमरा पर छी तें दुनू हाथ के कंगना सँ,
 दुनू डोर के पान सँ, दुनू स्तन के हार सँ ओ दुनू पासर के नूपुर
 सँ होत कियेक करै छी ? ई अहाँ के चेष्टा तें आश्चर्य अछि ।
 हे मुखे ! अतका पर तमसायके के आतक सम्पत्तिक हरण कय
 सकछ ? ॥६॥

आओष,

[गीत सं०—११]

कुलिश-समान-वान = वज्रक समान बाण बनाय आँवके, दिहु =
 स्थिर । भोह-कमान = भोहलूपी धनुष पर । समधान = निशाना
 दिवतर = विशेष सकल । पीन पयोधर गिरिवर = पुष्ट स्तन रूपी बुद्ध

विद्वतर पीन पयोधर गिरिवर युगल साधि रतिरञ्ज ।
 बाहुपाश लय दिहु कय बान्हिअ, न कर वधा मनभञ्ज ॥
 तुअ यदि रुचित विरोध कमलमुखि, होअओ, करिअ जनु देरि ।
 चम्बन सरस बिलोकन भाषण, देहु पुरवकृत फेरि ॥
 रसमय शरद समय सुखयामिनि, ततय उचित नहि मान ।
 एकरवेश्वरसिंह बुलबि रस, हर्षनाथ कवि भान ॥

अपि च,

गीत सं०—१२

रमनि हे ! परल कओन मोर दोष ।
 किए नहि नयन हेरिअ, नहि भाषिअ, किए मन वषजल रोष ॥
 तुअ रुचि-विजित निरखि निजकामिनि, तुअ अनुचर मोहि जानि ।
 कुपित भयन शर, हनय सुदिहु कर श्रवण अवधि धनु तानि ॥
 रसमय शयन सरस नव कानन, सरस शरद निशि मोहि ।
 लयइल सकल बिरस अति हेरइत, अधर सुखायल तोहि ॥
 मोर अपराध, अकर निज सुधार । कोप अपमतम द्वास ।
 परसि तपाविअ, समुचित मानिअ अपद्व कोप प्रकाश ॥

टा पहाड़ मे । साधि = लगाय, कसि । बाहुपाश = बाँहिक फानो ।
 वधा = धर्य ॥ रुचित विरोध = विरोध पतनद अछि । पुरवकृत =
 पूर्ण मे कयल चम्बनादि हमर धुराय दिअ । सुख-यामिनि = सुखदायी
 राति ॥

आओरो,

[गीत सं०—१२]

रमनि = सुन्दरी । तुअ रुचि = अहाँक सुन्दरता सँ जीतलि अपन
 कामिनी (पत्नी) के देखि ओ हमरा अहाँक सेवक जानि कामदेव
 कुपित भय कान तक धनुष तानि के मजबूत हाथे बाण मारैत छयि ।
 शयन = सुतव । कानन = वन । शरद-निशि = शरद ऋतुक राति ।
 बिरस = रसहीन । अधर = डोर । अपर = डोर के । कोप अपमतम
 द्वास = तामसे अत्यन्त गर्म द्वास क स्पर्श सँ । तपाविअ = तप्त

तमन निहारि जलन एक भाषिअ, करिअ अघर रस दान ।
एकरदेवदरसिह बुझयि रस, हर्षनाथ कवि भाव ॥

अभि न.

गीत सं०—१३

कुमुदिनि ! कस निज बदन विकास ।

तुअ गुणनिकरनियन्त्रित मधुकर, अनुसर न कए निरास ।
विगत विगत भेल, रजनि बदन देल, गगन निशाकर राज ।
उमि नेल उदुगन, तइअओ न परसन, तुअ मुख गुनल आज ॥
परिहरि बेलि चमेलि विषमदल, केतकि पुनद मरन्द ।
तुअ गुण गावय, श्रीदिस धावय, कतहु न रमय मिलिअ ॥
सुन्दर रूप मरन्द मनोहर, जगअरि विविध स्वास ।
करिअ सफल धनि, बुझिअ हृदय गुनि, पुरिअ मधुकर आस ॥
परसनि अय मुख सोन तेआगिअ, करु पुनगति ! रस दान ।
एकरदेवदरसिह बुझयि रस, हर्षनाथ कवि भाव ॥

राधा—जुतं गुण मधुकरतन, जदो महुलोहेण यथ तत्त्व भगसि ।
अं दुषो मे कुमुदिनितन, अशो प मं महुअरो अणुतरह । [सुत]
सब मधुकररसम्, वसो मधुल भेन यन तन भममि । न पुनमे कुमु-

करेत छी । समुचित = ताहि सौं ठीके बुझाइछ ॥

आश्वीरो,

[गीत सं०—१३]

तुअ गुणनिकरनियन्त्रित = अहाँक गुण-संग्रह सौं बस मे आयल ।
मधुकर = भौंरा । अनुसर = अनुसरामी अछि ॥ विगत = विलस ।
रजनि = राति मे । निशाकर = चन्द्रमा । उदुगन = परेगन । परसन =
प्रसन्न । परिहरि = छोड़ि । विषमदल-केतकि = अशमान (काँटयुक्त)
केओलाक फूल । मरन्द = पशुप । धावय = दीड़ैत । मिलिअ =
भौंरा । परसनि = प्रसन्न । सोन = सुनौ । तेआगिअ = छोड़ ॥

राधा—अहाँकेँ, भौंराक स्वभाव ठीक अछि, जे मधुकर लोग सौं अतय ततय
घुमैत छी । आ हमरा कुमुदिनीक स्वभाव नहि अछि कियेक तँ भौंरा

दिनीह्वम्, यतो न मां मधुकरोऽनुसरति ।] (पुनस्सकोपं तेन
समीत्य—

[गीत सं०—१४]

माधव ! बृजल तोहर सिनेहे ।

जाहि रमनि सङ्ग रहनि गमाओल, जाहु अचिर तसु बेहे ॥
मधुमय बसत भुगत के माधव, छाडि देहु गुणमाने ।
सनिशुनि कपट चरित तु सुविदित, भयल बुझओ मोर काने ॥
अमजल भरल सबल तन, लोचन जापर-रञ्जित शोने ।
सुखमय साथन सदन तसु चाहय, जे तुअ मानस लोभे ॥
प्रेमरङ्ग तुअ अङ्ग लपटि निज, भूषण छापल रागा ।
तुअ तनु आज निरख अवधारल, तसु भूषण अभिरामा ॥
करिअ कृपा निज भवन गमन कर, तुअ दरशन नहि भावे ।
एकरदेवदरसिह बुझयि रस, हर्षनाथ कवि भावे ॥

(इष्टपुष्पाय सह्या सह निष्कान्ता ।)

हमरा दिया नहि अनीछ । (केर बीच गहित आँखि खोलि)—

[गीत सं०—१४]

रमनि सङ्ग = रमणीक सङ्गे । रहनि = राति । अचिर = क्षीघ्र ।
तसु बेहे = तकर घर । कपट-चरित = छल-युक्त अहाँक स्वभाव । सुवि-
दित = हमरा नोक जकाँ बुझल अछि । अमजल-भरल = अम कयला
पर-पसेना सौं भरल । सदन तसु = ओहि नायिकाक घर मे । तुअ
मानस लोभे = अहाँक मन मे लोभ अछि ॥ भूषण छापल रागा = ओ
सुन्दरी अहाँक देह मे अपन महमाक छाप बन देलको निरख अवधा-
रल = देखिकेँ मुसलहुँ । तसु भूषण = आकर रहना बेहन सुन्दर
छाँ सौं ॥

(कहि सखीक संग कहार भव तेलि ।)

श्रीकृष्ण—(सर्वोत्तमम्) कय-जुलैय प्रकुपिता प्रियतमा । तत्किमेषामुष्टेयम् ?
कथं वा धृति धारयामि ? को वा लोकोत्तरममोषो तो विस्मर्य
पारयति ? अहो शरीरशोभयेम् । तथाहि—

[गीत सं०—१५]

किं बहव अवसरे नागरि ह्वये ।

नीलवसति धनि, जलद्वलित जनि, थिर-रहु सङ्घित-सरूपे ॥

राजित बदन मनोहर तावर, कुन्तल कुटिल विराजे ।

राहुदशन शर तिमिर मुकाएल, जनि रजनीकर राजे ॥

बल्लिल रोमावलि भुजमि नाभिविल, लोचन खञ्जन आसे ।

कुचकञ्चनानिरि-निकट मुकाइलि, नासा-मण्ड तरासे ॥

तूपुर पथराग-पथशिञ्जित ललित-मदन-भू-तिकञ्जे ।

श्रीकृष्ण—(विकलतापूर्वक) की चले श्रेयोह तमसावलि प्रियतमा ? त एतय
को करी ? कोना कय धीय घर ? अथवा के ओहि अलौकिक
सुन्दरी के बिबरि सकैछ ? अहो शरीरक सुन्दरता । जेना कि—

[गीत सं०—१५]

नागरि-ह्वये = चतुर्धा नायिकाक स्वरूप । नील-वसति = नील रङ्गक

कपड़ पहरिने । जलद-वलित = मेघ मे घोषित । सङ्घित = क्षिप्त

लोका ॥ राजित = शोभित । कुन्तल कुटिल = केवल टेढ़ । राहुदशन =

राहुपहक कटवाक (गहण लगवाक) । तिमिर = अन्धकार मे । रजनी-

कर = चन्द्रमा । रोमावलि भुजमि = रोहोके पांती करी सांघित ।

नाभिविल = होही रूपी विल सी । लोचन-खञ्जन-आसे = शीखि करी

खञ्जन-पक्षीके खववाक आवासी । कुच-कञ्चन-निरि = स्तनरूपी

होनाक पर्वतक समीप । मुकाइलि = विलीन भेल । नासा-मण्ड-तरासे

= नाक रूपी मण्डक लोलक उरै ॥ पथराग-पथ-शिञ्जित = मणिक

समान छाल पाएर मे भुनझुगाइछ । ललित-मदन-भू-तिकञ्जे = सुन्दर

नचैत कर्णपूल । नयन-भेद = अलिक भङ्गिमा । पुलक = आनन्द ।

नयनभेद कहूँ, पुलक बह्म मह काक विशेयक पुञ्जे ॥

तसु तनु रचल मदन जनि रसमय, की रसलम्पट बाने ।

जप-तप-निरत सतत रसवञ्चित, की बिह रचत अजाने ॥

सुन्दर अघर मधुरिमद मञ्जय, कटि कैहरि अभिमाने ।

एकद्वेदवरसिंह हुनखि रच, हर्षनाथ कवि भाने ॥

अथतु, कर्तव्योपेक्षा नुनययत्तविशेषः (इति निष्काङ्कः) ।

॥ इति तृतीयोऽङ्कः ॥

अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति संसम्प्राप्ता विशाखा)

विशाखा—अज वणु शरीरकहेण कलम्बतलमि आहुदाम्हि । एमो कल-
म्बकखो ता एरथ पतिवामि [अथ खनु श्रीकृष्णेन भावम्बतलमाहु-

अङ्गमह = देह मे । कनक = सोना । पुञ्जे = डेर ॥ मदन = काम-

देव । की रसलम्पट = अथवा रस मे क्षिप्त । रसवञ्चित = रस-

रहित अजानी निर्धाता कोना रचितथि ॥ अघर मधुरिमद मञ्जय =

ठोर मधुरी फूलक मद के मञ्जित करैछ । कटि कैहरि अभिमाने =

होर सिंहक अभिमान के मञ्जित करैछ ॥

बेग, एहिधाम प्रार्थना करवाक प्रयास सब करक चाही ।

(बहाइ भेडाह ॥)

॥ तेसर अङ्क समाप्त ॥

चारिम अङ्क

[हरवडाइलि विशाखा प्रवेश करैछ ।]

विशाखा—आइ त श्रीकृष्ण कदम्ब तर बचबाने छथि । ई कदम्बक गच्छ

साधिसि । एष कदम्बवृक्षः । तद्वत् श्रीकृष्णो भविष्यति । तस्मादेव प्रविशामि ।] (इति प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति चित्तानिमग्नः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा सहर्षमाश्रितो दत्ता) प्रियसखि विशाखे ! अद्यात्तैव कोप-
कलुषितमात्मना प्रव्रज्याः प्रियसखी मामनादृत्य कदलीवाटिकां
प्रस्थिता । तदवावलोकाय विधेयम् ।

श्रमि च—

[गीत सं०—१६]

किं करव जाव यत्न हव रे, तेधि गेलि ब्रजरासा ।
सुखद-नेह भेल तनि किनु रे, बुझमव परिगमा ॥
केतकि कुम्ह कुमुदरस रे, परिगल लय धीरे ।
बहुम मन्द मलयानिल रे, मोर दयह खरीरे ॥
अलिकुल मान कान बह रे, ससिकर तनुवाये ।
जन्दनपरस सुमरि पुन रे, मानस मोर काये ।
येहि विधि होख समामग रे, तमु करिअ ब्याई ।
करिअ यत्न तखि माननि रे, मोहि देहु भलाई ॥

श्रिक । त एतय श्रीकृष्ण होयके करताह । ते एतय प्रवेश करैत छी ।
(प्रवेश करवाक अभिनय करैत छथि ।)

[तखन चित्ता मे डुबल श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण—(देखि सहर्ष आसीन होइ दय) प्रियसखी विशाखा ! आइ अत्यन्त
तामस सँ मलिन मनवाली अहाँक बियसखी हमर अनादर कर
जान मे चले गेलीह । से एहिठाम की कनी से बिसार ।

आओरी—

[गीत सं०—१७]

यत्न = प्रयास । ब्रजरासा = ब्रजभूमिक सुन्दरी राधा । नेह = स्नेह ।
परिगमा = परिणाम फल । परिमल = सुगन्धि । बहुम = जखैल ।
अलिकुल = भीरक समूहक । कान बह = कानके भरवैल । ससिकर

हर्षनाथ कबिदेखरे रे, रसमय इहो भागै ।

एकरदेखरसिह रस रे, बुझ मुणक निधाने ॥

विशाखा—जहामइ-वोहव उखअ करिसँ । [अधामतिवैभवम् उपाय
करिष्यामि ।]

श्रीकृष्णः—तावदहं भाण्डीरनिवटं मच्छामि (इति निष्क्रान्तः ।)

विशाखा—(परिष्कष्य) इअं ककलीवाटिका । एतय पिअसही हुबिसदि ।
ता एतय पविशामि इअं ककलीवाटिका । अय प्रियसखी भविष्यति ।
तद्वत् प्रविशामि । (इति प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णावधीरजानुत्पन्ना मध्या ललितया सह राधा)

राधा—सहि कअबहुबिणखो वि सिरैकण्हो मए जोहीरिदो त्ति अहो
पभायो ! कि एतय करणिज्जं । कहं पुनो वि समानमो हुबिसदि
[सखि कृतवहुबिणखोऽपि श्रीकृष्णो मयाऽकधीरित इत्यहो प्रवादः ।
किमय करणीयम् ? कथं पुनरपि समानमो भविष्यति ?]
(इत्यनुतापं करोति) ।

तनु तावे = चन्द्रमाक किरण देह मे ताप दैछ । जन्दन-वरस = चानक
स्पष्टके । सुमरि = स्मरण कर । मानस = मन । मानिनि = मानवत्तीके ।

विशाखा—अबन बुद्धि-वैभवक अनुसार उपाय करब ।

श्रीकृष्ण—तावह हम बड़क भाछक लग जाइत छी । (बहार भेलाह ।)

विशाखा—(रहल) ई करणान श्रिक । एतय प्रियसखी होयतीह । त एतय
प्रवेश करैत छी । (प्रवेशक अभिनय करैत छथि ।)

[तखन श्रीकृष्णक द्वारा अवहेलना सँ सतप्त, सखी ललितया संग
राधा प्रवेश करैत छथि ।]

राधा—सखी ! बहुत विनय कयनहुँ श्रीकृष्णक हम अवहेलना कयल—ई त
बड़ गलती भेल ! आब की करी ? कोना फेर मिलन होयल ? (रहता-
इत छथि ।)

विशाखा—इयं मित्रसखी किमपि मन्तेति ता लदान्तरिक्षा भविष्य इमां
रहस्यमन्तर्यं युजाभि । [इयं मित्रसखी किमपि मन्तेति । तत्
लदान्तरिक्षा भविष्य इमां रहस्यमन्तर्यं युजाभि ।] (इति तथा
करोति ।)

[गीत सं०—१७]

राधा—सखि हे । यतन दय कर खोर काजे ।
कोनपरि आज देखव वजराजे ॥
पीत—वसन तनु धन—अभिरामे ।
लसय कनक खनि शालगरामे ॥
सुन्दर वदन नयन अभिरामे ।
लसय खज्जन पङ्कजधामे ॥
कनक मुकुट शिखिपुच्छ विराजे ।
जनि कञ्चनगिरि सुरधनु राजे ॥
राजित कर बिच मुरलि विशाला ।
लसय कमल जनि पंकजनाला ॥

विशाखा—ई मित्रसखी किछ विचारैत छथि । त लसीक अदभय हिनका मुक्छ
परामर्श सुनैत छी । (तहिना करैत छथि ।)

राधा—

[गीत सं०—१७]

यतन = प्रयास कर । वजराजे = श्रीकृष्णके । पीत-वसन = पीयर
वस्त्र । तनु धन-अभिरामे = मेघ सन सुन्दर देह पर । लसय = लोभेछ
कनक = सोन । शालगरामे = शालग्राम पाथर पर । सुन्दर वदन =
सुन्दर मुँह पर । नयन अभिरामे = सुन्दर आँखि । पङ्कज धामे =
कमलरूपी घर मे ॥ शिखिपुच्छ = मयूरक पंखि । कञ्चनगिरि =
सोनाक पर्वत पर । सुरधनु = इन्द्रधनुष, पनिसोखा । राजे =
शोभित ॥ राजित = शोभित । कर बिच = हाथक बीच मे । लसय

रसमय हर्षनाथ कवि गावे ।
एकदेखरसिह वृक्ष गावे ॥

अपि च—

[गीत सं०—१८]

सुनु सखि ओरे कओन पुरितफल दुरमति । यदुपति,
कयल अनावर निजमति ॥
तनि मोहि ओरे, एक प्राण छल दुइ तनः सह खनः
कयल भेष हम निज मन ॥
विधिवश ओरे, यदि न मिलत गुरलीधर, यदुधर,
हतव जीव कहि मरिधर ॥
उपधर ओरे, मोर अवगुन पहु बिसरधि, आदधि,
दिन दिन नेह बडावधि ।
रग बुध ओरे, रसभावक जन मत दय, गुणमय,
हर्षनाथ भन रसमय ॥

(इति चिरन्ति हस्तं निधाय विरहवेदनाभिनयति) ।

ललिता—सहि ! समरससिहि । [सखि ! समापवसिहि ।]

राधा—(सखेदम्)—

कमल = कमलक फलक रंग शोभित होइछ । पङ्कज-नाला = कम-
लक नाछ ॥

आओरो,

[गीत सं०—१८]

पुरितफल-दुरमति = पापक फल विक ई दुबुद्धि । यदुपति = कृष्णके ।
निजमति = अपन बुद्धि सँ ॥ तन = देह ॥ विधिवश = संयोग सँ ।
हतव जीव = प्राण त्यागल ॥ उपधर = अपाव कर ॥

ललिता—सखी । धैर्य धर ।

राधा—(वेद सहित) —

[गीत सं०-१६]

एकसारि कोन परि लेपव, सरस सरसभनु आज ।
मदन-दहन दह मोर तनु, कि करव पहु न समाज ॥
मोकि कुमुवरस हपिल, मुञ्जल अलि दह कान ।
सजल नलिनिल पानन मोर तनु अनल समान ॥
दहओ जानि मोहि एकसारि सीति-सहोदर पान ।
जगतप्राण नहि समुचित, तोहि मोर हरहु परान ॥
मनसिज मोर सग तापस, कि कहव परजन दोष ।
केओ न तमु हित जगभरि, जाहि करव बिह रोष ॥
बुझत पराभव के मोर, के मोहि होएत सहाए ।
सकल जगत मोहि विवरित, कतहु न जिवन-उपाए ॥
हृदयनाथ कविशेखर, रसमय भग दश गाव ।
गुणमय एकरदेवसिंह बुझ अभिनव भाव ॥

विशाखा—एदण इमाए वरणावणाशेष तवकीअइ, उत्कण्ठिता प्रियसखीति । तव सुलभ
होति । ता सुलभ चैव कञ्जलि उदसम्पामि इमं [एतेन अस्यां

[गीत सं०-१७]

मदन-दहन = कामदेवरूपी आगि । दह मोर तनु = हमर देह के जर-
धत अछि । पहु न समाज = पति समीप नहि छथि ॥ कुमुवरस =
फूलक रसके । अलि = भीरा । सजल नलिनिल = पानि देल पुर-
हानिक पात वा फूलक पत्ती । अनल = आगि । दहओ = जरावस ।
सीति-सहोदर = सीतिलिक (लक्ष्मीक) सोदर भाय । पानन = चन्दमा ।
जगतप्राण = तैं संसारक प्राणदाता कहाज हमर प्राण हरैत छह जे
उचित नहि बिहह ॥ मनसिज = कामदेवक । परजन = आनक । बिह
विधाता ॥ पराभव = दुःख ॥

विशाखा—हितक एहि वजन-विन्यास सँ बुझि पईछ जे प्रियसखी उत्कण्ठिता

वचनोपप्राप्तेन तवयै उत्कण्ठिता प्रियसखीति । तव सुलभ
चैव कार्त्तम् दम्पसम्पन्निनाम् । [दम्पसम्पत्ति] ।
राधा—[दम्पसा मोच्छवासम्] कहं प्रियसखी ? प्रियसखी ! एतव वचनि-
शतु भोदी [कथं प्रियसखी ? प्रियसखी ! अनोपविशतु भवती ।]
[दम्पसम्पत्ति] ।

विशाखा—किणो उद्विग्माव लक्ष्मीअइ भोदी ? [किमुद्विग्नेव लक्ष्यते
भवती ?]

राधा—[मोहमे] अप्पणो सहीअणे कि अकहणिज्जो ता सुणाहि ।
[वात्मनः सखीजने किमवधनीयम्, तच्छृणु ।]

[गीत सं०-२०]

सुनिध सुषेतनि सहचरि, कि कहव निज अविचार ।
कमल रोष-कुलुषित मन, सुपहु अनादर भार ॥
बहुविधि विनति कमल पहु, समर रइनि बिति गेल ।
कुलिश-कठोर हृदय मोर, तइओ न परसन भेल ॥

छथि । तखन स काक सुलभे अछि । तैं हिनक लग जाइत छी ।
[लग जाइत छथि ।]

राधा—[देखि पेश सँस लेत] अए प्रियसखी ? प्रियसखी ! अही एतय बँसू ।
[वेसवेन छथि ।]

विशाखा—विकल अहाँ किनेक लगैत छी अहाँ ?

राधा—[उद्वेग सहित] अपन सखीक लग कोन बात नहि कहवा दोस्य अछि,
तैं सुनु—

[गीत सं०-२०]

सुषेतनि = सुषेयारि । कुलुषित मन = मलिन मन सँ ॥ बहुविधि =
बहुत तरहें । समर रइनि = सम्पूर्ण राति । कुलिश-कठोर = वक्त्रक
समान कठोर हृदय, परसन = प्रणम्य ॥ नाहु = शिथिल । अन्तर बाह
= हृदय में जवाला अछि ॥ सरस नाह-विरहानल = रसिक पतिक

हम इति गेलहु रोप करि, मखिन जवन भेल नाहो ।
तइओ न छरि हम हेरक, से मोर अक्षर दाह ॥

कि कहल अवन मनोहुन, अवनहि कुकु अनुमानि ।
सरस-नाह-विरहानल, के सहि सकय सेआनि ॥

कि करत सञ्जन-सञ्जति, सुमति नीति उपदेश ।
विह विपरित मुनिजगदुक उज्जय कुमति विशेष ॥

केरि हम एहन करव रहि, कय सखि तेहन जण ॥
एक बेरि विनति करयि पह, मोर गीरव रहि जाइ ॥

शृष्यनाथ कविवेखर, रसमय मन दय गाव ।
एकरदेखरसिद्ध रस, भावक सरस सुभाव ॥

विशाखा—(आत्मगतम्) । सखि! तबिकदं मय, सुलहं कज्जति । (प्रका-
शम्) सहि ! शहि, तुम विना सिरीकन्हो वि तुम विरहवेक्षण
अपभ्रंश विविक्तचित्तव भवई । तां सुलहं तुम कज्जति
महिलावाचनं गुरु अचिट्टु मोदी । अहं वि सिरीकन्हं तस्य आन-
इम्मे । [सत्यं चेतनं जनिमं यमा सुलहं कार्पमिति । सखि ! राक्षि
स्वो, विना श्रीकृष्णोऽपि स्वमिव विरहवेदनामनुभूय विक्षिप्तचित्त
इव भ्रमति । तत् सुलहं तव कार्पम्, इति महिलावाचनं परित्या-
ज्यैतु भवती । अहमपि श्रीकृष्णं तज्जानमिष्यामि ॥]

[इति निष्काशाः सर्वाः]

इति चतुर्थोऽङ्कः

विधायक आदि के । सेआनि = चतुर नायिका । विह-विपरित =
जवन विधाता विरीत हूँवि । कुमति = अवकाश विचार ॥

विशाखा—(मनहि मत) ई तैं सते हम तक कयने छलहु के काज सुलभ अछि ।
(प्रकाश) सखि राधिका ! कहीन चित्त श्रीकृष्णो अही जकी
विरहवेदनाक अनुभव कय विक्षिप्त मन सगक भेल चुनैत छयि ।
ते सुलभ अही काज अछि । से महिलावाचन जाय अही रहू ।
हमहु श्रीकृष्णके ओतय आनव ।

[सम बहार भेल ।]

॥ चारिम अङ्क समाप्त भेल ॥

अथ पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति चिन्ताकुलः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(स्वगतं) कथमिदानीमपि नगता विशाखा ? किमत्र विलम्बका-
रणम् ? किमु प्रोचयेन यत्र कुत्रापि प्रस्थिता श्रियतमा न
मिलिता ? कि वा बहुतरयत्वेनाप्यनुत्तराङ्गीकरोति ? अथवा
परचित्तानुवाचनानिशा विशाखा तदनुत्तरयत्ने विचित्रावस्थास्ते ?
किमत्र द्विचयम् ? (पुनः सर्वांताः परिक्रम्य कृष्ट्वा सहर्षं) इयमा-
नतैव ।

(ततः प्रविशति हृष्टेः कुलमातया विशाखा)

विशाखा—कुसलं भवते ? [कुसलं भवति ?]

श्रीकृष्णः—विशेषतस्तवयमनेन । कथं कि साधितमभीक्ष्णम् ?

पंचिम अङ्क

[चिन्ता सौ व्याकुल श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छयि ।]

श्रीकृष्ण—(स्वगतं) एतन् प्ररि विशाखा द्विवेक नहि आयलि छयि ? एहिनाम
विलम्बक कौ कारण । की तमसायके जतय कतहु गेलि श्रियतमा
नहि जेटलविह ? अथवा की बहुत यत्नहुँ सौ प्रार्थना केँ गहि
स्वीकार करैत छयिन ? अथवा आनक मनक सन्ताप सौ अपरि-
चित विशाखा हुनक अनुत्तर करवा भे सन्द पड़ि गेल अछि ? एहना
मे की करी ? (फेर सब दिय गहलि देखि सहर्षं) इयेह आविदे
गेलीह ।

[तखन अनन्तर सौ उल्लास भाल मनवाली विशाखा प्रवेश करैत छयि ।]

विशाखा—अगने कुशल श्री ?

श्रीकृष्ण—विशेष रूपेँ अहीक आनखन सौ । यह की इष्ट साधन कयल ?

विशाखा—अब ई ? [अंध किम् ?]

श्रीकृष्ण—विशेषण कथय ।

विशाखा—मधरोष्ठि अहिअदरं उद्विगमाहिअवा सुखकिदे अह्माणं पिअसही
राहिवा मल्लिकावणे निष्टुह । सा भसि आरुसासणीआ सा ।
[स्रवतोऽप्यधिमतरम् उद्विगमाहिअवा त्वत्कृतेऽस्माकं प्रियमखी रात्रिका
मल्लिकावणे तिष्ठति । तज्जटित्वाइवासनीया सा ।]

अपि च,

[गीत सं०—२१]

मधय ओ रे, कि कहव तसु अपरस गति, गुतमति
तुअ बिनु लगु विगतमति ।।
हिमकर ओ रे, निरखि कागि कह अम्बर, अन्तर,
देख उमल निशि दिनकर ।।
कहइछ ओ रे, परस पावि तनु करपूर, कह दूर
कथोन देख तनु विपचूर ।।

विशाखा—त आओर की ?

श्रीकृष्ण—विशेषण कहू ।

विशाखा—अहूँ ही अधिक विकल हृदयवाली अहूँक लेल हमर प्रियसखी
श्रमिका मल्लिकावण मे छथि । तैँ सरदय हुवका आरुसासव
दिअरहु । आओर—

[गीत सं०—२१]

अपरस गति = अपूर्व हास्य । विगतमति = बंताछि । हिमकर = चन्द्र-
माके । निरखि = देखि । अम्बर = आकाश मे । अन्तर = मध्य मे । निशि
दिनकर = राति मे सूर्य । परस = स्पर्श । तनु = देह मे । करपूर = कर्पू-
रक । विपचूर = विपक चूर्ण । मासत = बसातके । भूजगद्वास = सौ-

मासत ओ रे, भूजगद्वास निरगद कर, कह घर,
देखु फलहु अछि विषयर ।।
कुसुमित ओ रे, उपवन निरखि चेअ कि रह, धनि कह,
देखु लागु दव हुतवह ।।
रग बुझ ओ रे, रस भावक जन मन दय, गुणमन,
हर्षनाथ भन रसमय ।।

अपि च,

[गीत सं०—२१]

मुनिअ वचन गिरिधारी, सुकुमारी, तुअबिनु जीवन हारी ।।
पवन परस नहि रोचे, वृत्ति मोचे कालियगञ्जन सोचे ।।
आन-किरण तह काये, तनुतापे, मन्दरमिदि कर साये ।।
मदन-वेदन तनु धारी, व्रजनारी, कर मुगिरन विपुरारी ।।
अनुछन कर तुअ ध्याने, अनुमाने तेँ नहि तेजय पदाने ।।
अचिर अन्धिय मधुराजे, तस काजे, करिअ यतन दय आजे ।।
हर्षनाथ अवि गायै, मन लावे मुनिजन आनधि भावे ।।

एक एवाक कुर्मंत अछि । कुसुमित = फुलपल्ल । उपवन निरखि = फुलवाड़ी
के देखि । चेअ कि = चौकंत । दव-हुतवह = दावानल, जंगली आगि ।।

आओर,

[गीत सं०—२१]

गिरिधारी = कृष्ण । पवन-परस = एवाक स्पर्श । रोचे = सोहाइत
छर । वृत्ति मोचे = पैयं छोड़त अछि । कालिय-गञ्जन सोचे = कालिय-
नागक दुर्गंतिक सोच करैत छथि जे ओ रहितथि तँ एहि दुखदायी बसातकेँ
पीबि जंतथि । तह = हाँ । तनु तापे = देह तप्त । मन्दर-मिदि कर साये = मन्द-
राजल पर्वतकेँ आप दैत छथि जे ओ कियेक नहि एहि दुखदायी चन्द्रमाकेँ अह
कय दैत छथि । मदन-वेदन = काम-अवधार । मुगिरन विपुरारी = गह्राइव-
क स्मरण करैत छथि जे कामकेँ जरओने छलाह । तेँ = अहाँक ध्यान कर-
माक कारणे । अचिर = शीघ्र । यतन = प्रयास ।।

श्रीकृष्णः—(आत्मगतम्) अहो विधेः सुकुलता, यत्कृतापराधोऽप्यहमेवाभ्यर्ष-
नीयः संवृत्तः । अहो सरलस्वभावता प्रेयस्याः ! (प्रकाशम्) मयि
विशाखे ! भट्टिनि विद्यावासनाय मल्लिकावनं सत्तुल्यम् ।
(इत्युभौ परिक्रमं नाटयतः) ।

श्रीकृष्णः—(विलोक्य सबहुमानम्) अहो मल्लिकावनशोभा ! तथाहि—
[गीत सं०—२३]

सकुल - भुवन - जनमोहन कामा ।
उपगत ललित लता - नवरामा ॥
कुसुमवदन तमु हास विकासा ।
बाहु विटप, पल्लव कर भासा ॥
गुच्छ पयोधर मद्य मरन्दा ।
रसिक मधुपजन आनन्दकन्दा ॥
कलविङ्क्री कल नूपुर राधे ।
मधुपावलि मणिमाल सोढावे ॥
तनु उद्वर्तन पुष्पपरागा ।
शिर सिन्दुर उरगत नवरामा ॥

श्रीकृष्ण—(स्वगतं) अहो विधाताक अनुकूल भेनाई, जे अपराध कयलहु पर
हमही आर्थनीय भेलहु । हाय प्रियाक कोमल स्वभाव ! (प्रकाश)
सखी विशाखा ! भट्टदय प्रियाक आश्वासनक हेतु मल्लिकावन
जाएव ।

(दुह जयबाक अभिनय करै छथि)

श्रीकृष्ण—(देखि बहुत आदरक संग) अहो मल्लिकावनक शोभा ! जेना कि—
[गीत सं०—२४]

उपगत = उपस्थित । ललित-लता-नवरामा = सुन्दर ललीकी नवीन
सुन्दरी (नायिका) । कुसुम-वदन = फूल सँ युक्त ओहि लताक मुँह ।
बाहु विटप = ओकर बाँहि गाल धिक । पल्लव कर भासा = पल्लव
हारा रूप मे शोभित । गुच्छ पयोधर = फूलक गुच्छा स्तन धिकेक । मद्य
मरन्दा = फूलक रस मदिरा धिकेक । रसिक मधुपजन = भौरा
रासिक प्रेमी धिक । आनन्द-कन्दा = अतिशय आनन्ददायी ॥ कल-

कुसुम - सुगन्धि - सुवासित देहा ।
मास्तचुम्भित नवल मितेहा ॥
किमलय वन्दन पुलकित वेशा ।
कोकिलकूजित भणित विशेषा ॥
हर्षनाथ कविशेखर भाने ।
एकरदेखरसिह रस जाने ॥

भवस्वभाव मध्येयसो भविष्यति । तथावदज प्रविशामि । (इति
प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति शिशिरोपचारव्यग्रहस्तया सख्या सममुपविष्टा
राधा)

राधा—(संस्कृतभाषिण्य)

ईदृशतिरेकेण मयाऽन्यमप्या

तिरस्कनश्चाट वदन्ततोऽपि ।

भाष्यं तथा मे भविता यथाऽसौ

पुनः प्रसादाभिमुखो हरिः स्यात् ॥७॥

विङ्क्री-कल = बगरा पक्षीक स्त्रीक चनचनाएव । राधे = शब्द करेछ ।
मधु-पावलि = भौराक समूह । तनु उद्वर्तन = देह मे लगयबाक उद्वर्तन ।
नव रागा = नवीन अनुराग ॥ सुवासित = सुगन्धित । मास्त = हवा
सँ । किमलय कन्दन = नव लवक अंकुर सँ । पुलकित = आनन्दित ।
कोकिल कूजित = कोइलीक कुहुग्व । भणित-विशेषा = बजबाक
विशेषता ॥

रहओ एहीठाम हमर प्रेयसी होइतीहि । तँ कनेक एहिठाम
प्रवेश करै छी । (प्रवेशक अभिनय करै छथि ।)

[तखन ठंडाक उपचारक हेतु व्याकुल हाववाली सखीक संग राधा
प्रवेश करै छथि ।]

राधा—(संस्कृत भाषा मे) अजानी हम अतिशय ईर्ष्या सँ, नअ एषं खुशामद
करैत प्रियके अवमानित कयल । हमर भाष्य तँ तखने ठीक होयत
अखन श्रीकृष्ण पुनः प्रसन्न भय जयताह ॥७॥

श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा सहर्षं स्वगतम्) एषा मत् प्रेयसी किमपि मन्त्रयति । तस्या-
बलताश्रितो भूत्वा रहस्यसम्भाषणमस्याः शृणोमि । (इति तथा
करोति) ।

राधा—(पुनरपि 'ईष्यातिरेकेण' इत्यादि पठति) ।

श्रीकृष्णः—(धृत्वा आत्मगतं) मन्त्रिमित्र एवैषोऽभिलाषः । तदुपसर्पामि ।
(इत्युपसृत्य प्रकाशं) किमेतत्प्रलपसि ? ननु ममैव तथा भाग्यं भवि-
तेति वक्तव्यम् (इति राधिकां करे गृह्णाति) ।

राधा—(ससंभ्रमं स्वगतं) कथं सुदं रहस्यमन्तणं अज्जवरण ? अहो
पमादो ! [कथं ध्रुतं रहस्यमन्त्रणं आर्षपुत्रेण ? अहो प्रमादः ।]
(इति सलज्जमधोमुखी तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—(राधाया मुखमुल्लस्य)
स्वद्वियोगानलज्वालाप्रतप्तं निजकिङ्कुरम् ।
अयि चन्द्रानने कान्ते ! सिञ्च वागमृतेन माम् ॥१॥

श्रीकृष्ण—(देखि सहर्षं स्वगतं) इयेह हमर प्रेयसी किछु विचारैत छथि । ते
ताबत लत्तीक अइ भय गुप्तभाषण छिनक मुनेत छी । (ताहिना
करैत छथि) ।

राधा—(करे 'ईष्यातिरेकेण' इत्यादि श्लोक सं०—३ पढ़ैत छथि) ।

श्रीकृष्ण—(सुनि स्वगतं) हमरहि दुनारे ई प्रलाप होइत अछि त लग जाइत
छी । (लग जाय प्रकाश) ई की प्रलाप करैत छी ? ई त हमरे
ओहन भाग्य होअओ से कहू । (राधा क हाथ पकड़ैत छथि) ।

राधा—(हरबडाय स्वगतं) की सुनि गेलाह गुप्त-वातकि आर्यपुत्र ? हाय
रे असाबधानी ! (लाजे नीचांमुहे रहैत छथि) ।

श्रीकृष्ण—(राधाक मुंह उठाय) अहाँक विवोगरूपी आगिक ज्वाला सँ सन्तप्त
एहि अपन-सेवकस्वरूप हमरा हे चन्द्रमुखी प्रिये ! अपन वचनरूपी
अमृत सँ सीज गाना ।

राधा—(स्वगतं) कथं पुष्पां तद्वा अनादरं कतुअ दाणि धरिटठवअणं
भणिदव्वां । [कथं पूर्व तथा अनादरं कृत्वा इदानीं धैर्यवचनं
भणितव्यम्] (इति तथैव तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

अलं विवादेन सरोरुहाक्षि !
कुतागमि प्रेयसि युक्त एव ।

कोपः कुतोऽसौ विरति प्रयातु

प्रसीद मैत्रं भविताऽपराधः ॥१॥

राधा—मए उजेव कओ अबराहो वा कथानुणओवि तुमं ण अवलोइदो ।
ता मरिसदु अजउत्तो [मर्यव कुतोऽपराधः यत्कृतानुतथोऽपि
त्वन्नावलोकितः । तन्मर्ययस्वार्थपुत्रः] (इत्यञ्जलिं बध्नाति) ।

श्रीकृष्णः—(राधामङ्कमारोप्य) प्रिये !

[गीत सं०—२४]

तुअ विशलेय पराभव सजनी, जे किछु उपगत भेल ।

यतनहु कहि न सकिअ तत सजनी, से सभ अब दुर गेल ॥

राधा—(स्वगतं) पहिने ओहन अनादर कय एअत कोना भौर्यक वचन
बाजू ? (ओहिना ठाडि रहैत छथि) ।

श्रीकृष्ण—हे कमल-नयने ! पश्चात्ताप जनु करी । अपराधी प्रियजन पर अहाँक
द्वारा कयल कोष वचिते अछि । मुदा से आव समाप्त होअओ ।
प्रसन्न होअ आव एहन अपराध नहि होयत ॥६॥

राधा—हमही अपराध कयने छी जे यत्नपूर्वक प्रार्थना कयलोपर अहाँके
नहि देखलहु । ते तमा करु आर्यपुत्र । (कर जोड़ैत छथि) ।

श्रीकृष्ण—(राधाके कोर पर ब्रैसाय) प्रिये !

[गीत सं०—२५]

तुअ विशलेय पराभव = अहाँक विवोग सँ प्राप्त दुःख । उपगत =
उपस्थित । यतनहु = प्रयासो कयला पर । विशिवश = भाव्य सँ ।

विधिवश आज देखल ह्वसजनी पुन परसन मुख तोर ।
लोचनपुगल कुवाएल सजनी मुख मुखचान चकोर ॥
तइअओ प्रेप नहि विचलय सजनी जखी होअ अन्तरदूर ।
गगन जलद लखि हृषय सजनी कानन वसत मधुर ॥
अइअओ पिशुन प्रतिरोधक सजनी छुटय न प्रेमक लागि ।
धरिअ मलिल जतवत्सर सजनी रविमणि तेजय न आगि ॥
धरिअ हृदय मम शीतल सजनी लोचन कमल निहारि ।
सीचिअ वचन सुधारस सजनी निज अनुचर अवधारि ॥
हरिपद पङ्कज मधुकर सजनी हर्षनाथ कवि गाव ।
एकरदेइवरसिंह बुझ सजनी रसमय मन दय भाव ॥

राधा—(सहर्ष) पुणोषि वनविहाराय उवकण्ठदि मे हिंजअ । जइ
भअवदो अनुगहेण वनम्ब उदू निअओह्वं पकडइरसदि । [पुनरापि
वनविहारापोरकण्ठमे मम हृदयम् । यदि भगवतोऽनुगहेण वनस्त-
ऋतुनिजबैभवम् प्रकटविष्पति ।]

पुन = फेर । परसन = प्रसन्न । लोचन-पुगल = हुनू अग्नित्व । मुख
चान चकोर = अहाँक मुखकपी चन्द्रमाक लेख चकोर पक्षी स्वरूप
(आँखि) ॥ विचलय = विचलित होअय । गगन जलद लखि = आकाश
मे भेष देखि । कानन = वनमे । पिशुन = चंगिला । प्रतिरोधक = बाधा
कयनिहार । मलिल = पानि मे । जतवत्सर = सैंकड़ो वर्ष तक । रवि-
मणि = सूर्यकान्त मणि । मम = हमर । लोचन-कमल = कमल सनक
आँखि सँ । वचन सुधारस = वचन कही अमृतक रस सँ । निज अनु-
चर अवधारि = अपन सेवक बूझि । हरिपदपङ्कज मधुकर = कृष्णक
चरणकमलक भ्रमर ॥

राधा—(सहर्ष) फेरो वन-विहारक लेख हमर हृदय अरकण्ठिअ होइछ, जौ
भगवानक कृपा सँ वसन्त ऋतु अपन बैभव (सम्पति) के प्रकट
करितथि ।

श्रीकृष्णः—एवमस्तु (इति वसन्तं स्मरति) ।

(ततः स्मृतमात्रो वसन्तो भगवन्तं बहुमानयन् काननमवगाहसानो निज-
वैभवं प्रकटीयकार ।) यथा—

[गीत सं०—२५]

नवकुम्भ किशुक रश्मि चम्पक मलिकावल मालती ।
लस मधुक नीप नेवारि विकसित ललित माधनिका लती ॥
अतिलसत चाद लवङ्गलतिका कणिकार मोहावही ।
नव वकुल वकहुल नामनेसर सरस जन मन भावही ॥
पुन कोकिलाकुल मधुप काकलि कलित कानन सोहही ।
जनि कुसमसोरभ भार मन्वर अनिल मानस सोहही ॥
नव मलयवात समिद्ध मनसिज दहन पुवजन होमही ।
निज लाज मान विवेक धेरज करि पुरोधस सोमही ॥

श्रीकृष्ण—गहने होअओ । (वसन्तक स्मरण करैत छथि ।)

[तखन स्मरणमात्र कयला पर वसन्त भगवानके बहुत आदर
करैत वन मे पहुँचैत अपन वैभव (ऐश्वर्य) के प्रकट कय देल ।
जना—]

[गीत सं०—२६]

किशुक = पलाम । रश्मि चम्पक = सुन्दर चम्पाकल । मलिकावल
= धेलीक पौनी । लस = शोभित होइछ । मधुक = महु । नीप = कद-
म्ब । नेवारि = कुम्भजातिक फूल । चाद = सुन्दर । कणिकार =
कर्नल । मधुप-काकलि = शीराक मधुर गान । कलित कानन =
शोभित वन । कुसम-सोरभ-भार-मन्वर-अनिल = फूलक सुगन्धिक
भार सँ मन्द-मन्द चलैत बसात ॥ मलय-वात-समिद्ध = मलयाचलक
वसात सँ पहरल । मनसिज-दहन = कामदेव रूपी आगि । पुवजन
होमही = युवक सब के हवन करैत छथि (शोकैत छथि) । पुरोधस
सोमही = पुरहितो चन्द्रमा करैत छथि ॥ ऋतुराज बैभव = वसन्तक

शत्रुराजवैभव परमसौभाग्य प्रकट जग जन जानही ।
वृषभानुनन्दिनि निरखि कानन सफल लोचन मानही ॥
पुन करति कन्दुक केलि हर्षित कृष्णनेह बढ़ावही ।
कवि हर्षनाथ सनाथ जीवन गुगलपद मन भावही ॥

श्रीकृष्णः—किस्ते भूयः प्रियमुपकरोमि ?

राधा—आयोवि वरं निशं होइ ? तहावि इदं होइ । [अयोवि वरं प्रिय-
म्भवति ? तथाऽपि इदम् भवतु ।] (संस्कृतभाषिण्यः)—

धाराधरो वर्षतु धरि काले
वर्णास्त्रवधर्माभिरता भवन्तु ।
धर्माभिगुप्ता पृथिवी नरेन्द्रः
भूयात् सशस्त्रा, रमिका रमस्ताम् ॥१०॥

[गीत सं०—२६]

निजनिज धरम रमओ सभ लोका
कबहु त पावओ सज्जन लोका ॥
वरिसओ समय सलिल जलवाहा ।
करओ सकल जन प्रेमनिवाहा ॥

सम्पदा । सौभाग्य = सौन्दर्य । वृषभानु-नन्दिनि = राधा । कानन =
वनके ॥ कन्दुककेलि = गेनक खेल ॥

श्रीकृष्ण—आव अहाँक आओर प्रिय उपकार की करू ?

राधा—एहू से अधिक प्रिय होइत छेक ? तथापि ई होअओ । (संस्कृत मे)—

मेघ उचित समय पर जल धरिसओ, सभ जातिक लोक अपन
अपन धर्म पर तत्पर रहओ, पृथ्वी राजासभ से धर्मपूर्वक पालित भय
षास्य से पूर्ण होअओ ओ रसिक जन आनन्दित रहवु ॥१०॥

[गीत सं०—२६]

निज = अपन । रमओ = प्रीति करओ । सलिल = जल । जलवाहा =

कविजन काव्य रचओ आनन्दा ।
करओ रसिकजन वचनविनोदा ॥
खलजन राजसदन नहि आवे ।
अनुछन गुणिजन संस्कृत पावे ॥
धरणी शस्यभरलि सभकाला ।
पालधु धरम धरणि क्षितिपाला ॥
हर्षनाथ कवि मन दय गावे ।
एकरदेशवरसिंह बुझ भावे ॥

श्रीकृष्णः—एवमस्तु ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे) ॥

॥ इति पञ्चमोऽङ्कः ॥

इति श्रीहर्षनाथशर्मविरचितं माधवानन्दनाम नाटकम् ॥

मेघ । प्रेम-निवाहा = प्रेमक निर्वाह । वचन-विनोदा = वचन से आन
न्दित । खलजन = दुष्टव्यक्ति । राजसदन = राजाक घर मे । संस्कृत
= संस्कार । धरणी = पृथ्वी । शस्य = धान्य । धरम = धर्म से ।
धरणि = पृथ्वीके । क्षितिपाला = राजा ॥

श्रीकृष्ण—एहने होअओ ।

[सभ बहार भेल ।]

॥ पाँचम अङ्क समाप्त ॥

इति श्रीहर्षनाथ (शा) शर्माक बनाओल माधवानन्द
नामक नाटक पं० श्रीशशिनाथशास्त्रि विद्यावाचस्पतिकृत
'प्रबोधिनी' मैथिलीव्याख्या समाप्त भेल ॥

